साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 11
December 2015

हम न मरै मरिहैं संसारा, हमकूँ मिला जिआवन हारा।

डॉ॰ किरण ग्रोवर

एसो॰प्रो॰,स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,डी॰ए॰वी॰कॉलेज,अबोहर।

चलभाष–094783–20028

groverkirank@gmail.com

kirangrover@davcollegeabohar.com

समाज में क्षेत्रीय, साम्प्रदायिकता, भाषावाद, जातिवाद, असमानता, अंधविश्वास, अस्पृश्यता का ज़हर सर्वत्र विस्तारित हो रहा है। व्यक्तिवादिता के प्राबल्य के कारण मानव–मानव के मध्य अलगाव, विद्वेष, घृणा, संघर्ष, प्रतिस्पर्धा ,विषमता, प्रतिहिंसा आदि समाज को प्रदूषित कर रहे हैं। आज मनुष्य सुविधा साधनों के बाहुल्य के कारण दुश्चिन्ता अवसाद व आतंक से ग्रसित है। चारों ओर प्रपंच, क्रूरता, संहारक, अस्त्रों–शस्त्रों से घिरा मनुष्य आत्म विपन्न हो गया है। हम भावना का ह्रास कर अपनी–अपनी आग में जल रहे हैं, जिसके कारण भावना का लोप हो रहा है। ऐसे कठिन समय में आवश्यकता है, ऐसे महामानव की जो मूल्य संक्रमण काल में कर्त्तव्य की उदात्तीकृत चेतना का संवहण कर सके। हिन्दी साहित्य की सर्वतोभावेन प्रतिभा महात्मा कबीरदास जी की वैज्ञानिक व तर्कपुष्ट विचारधारा का सम्बल समाज अगर ग्रहण करेगा, तो निस्सन्देह सामाजिक परिवेश आलोकित हो उठेगा। आधुनिक युग में व्यक्ति कर्त्तव्य च्युत होकर निरन्तर पतनोन्मुख हो रहा है। ऐसे समय में कबीर की विचारधारा कर्त्तव्य की उदात्तीकृत चेतना का संवहण करती है। सामाजिकों को कबीरदास जी ने कर्त्तव्य कर्म की ओर उन्मुख होने का सत्परामर्श दिया तथा कर्त्तव्य की शुचिताजन्य उच्चता का उद्घोष किया–

ऊँचे कुल क्या जनमियाँ जे करणीं ऊँच न होइ।
सोवन कलस सुरे भरया साधूँ निंध सोइ।।

कबीरदास जी ने समाज का वैज्ञानिक के रूप में यथार्थ का अवलोकन किया। समाज में समरसता की भावना अनुप्राणित कर सैद्धान्तिक व व्यावहारिक मान्यताओं में समन्वय करते हुए मानव को शुचिता के मार्ग पर चलने का संदेश दिया। पारस्परिक संदेह व अविश्वास की वृति के कारण समाज में सहयोग व समभाव संभव नहीं। कबीर की वाणी समरस भावना का बोध करवाती है–

प्रेमी ढूँढत मैं पिफरौ, प्रेमी मिलै न कोय।
प्रेमी को प्रेमी मिलै, तब सब विष अमृत होय।।

साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 11
December 2015

व्यष्टि को समष्टि में परिणित कर समरसता की ओर बढ़ने की दृढ़ता कबीर के व्यक्तित्व में विद्यमान रही। व्यक्तित्व की यही दृढ़ता व विश्वास कबीर को समरसतावादी महामानव के रूप में प्रतिष्ठित करता है–

कबीर खड़ा बाज़ार में सबकी मांगहि खैर।
ना काइ सों दोस्ती ना काइ सों बैर।।

कबीरदास जातीय विषमता सामाजिक असमानता व अस्पृश्यता से तिलमिला उठे, जिसका दंश उन्होंने स्वयं भी झेला, क्योंकि लीक से हटकर चलने में उन्हें सामाजिक तिरस्कार, बहिष्कार, एकाकीपन को सहन करना पड़ा। कबीर के पास विक्षुब्ध मन का उद्वेलन था, जो मनुष्य को मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठा दिलवाने के लिए संकल्पबद्ध रहा। कबीरदास जी ने संक्रामक युग में मनुष्य–मनुष्य के मध्य समानता की घोषणा करके भ्रातृत्व भावना का प्रसार किया। प्रेम के ढाई आखर पढ़ा कर मानव को मानव के सन्निकट लाना चाहा। कर्मों के प्रति निष्ठा उत्पन्न कर कबीरदास जी ने आदर व प्रेमभाव के साथ व्यक्ति समान देश में धर्म–निरपेक्षता की स्रोतस्विनी प्रवाहित की। मानव की केवल एक ही जाति है, परिश्रम ही उन्नति का पथ है, प्रेम ही महान् धर्म है, यह महामंत्र कबीर जी ने भी समाज में फूँका–

जाति न पूछो साधु की पूछ लीजियो ग्यान।
मोल करो तलवार का पड़ा रहने दो म्यान।।

प्रत्येक मनुष्य की आत्मिक व शारीरिक संरचना में किसी तरह का अन्तर नहीं। सभी मनुष्यों का शरीर पंच भौतिक तत्वों से विनिर्मित है और सबके भीतर एक ही आत्मा का अधिवास है। संत कबीर ने प्रेम भक्ति, सादगी, अहिंसा, समदृष्टि के द्वारा उदात्त मानवीय मूल्यों का प्रतिष्ठापन किया। कबीर का लक्ष्य समाज में समरसता, अहिंसा, भाईचारा, सुख–शान्ति व समृद्धि की स्थापना करना रहा। कबीर के विचारानुसार वास्तव में व्यक्ति वही है, जो सामाजिक समता हेतु अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर दे–

तन मन सीस समरपन कीन्हां, प्रगत जोति तहं आतम लीना

उनकी वैचारिक व समाज–सुधारक की भूमिका ही कबीरदास जी को सामाजिक, सांस्कृतिक क्रान्ति का उद्‌घोषक बनाती है। क्रान्तिधर्मी के रूप में संत कबीर ने समाज में हिन्दू व मुस्लिम सम्प्रदायों के बीच वैमनस्य की खाई को पाटने का भारी श्रम किया। कबीर की वाणी में हिन्दू व मुसलमान में से जिसका इमान ठीक है, वही इन्सान है–

सो हिन्दु सो मुसलमान जिसका दुरस रहे ईमान

कबीर का आत्मविश्वास उन्हें विश्व के व्यापक धरातल पर दिव्यता व भव्यता प्रदान करता है। कबीरदास जी ने जिस साधना का बीज बोया वह आज भी प्रासंगिक है। उनका दर्शन जीवित है, उनका संघर्ष ज़िन्दा है। वे वैचारिक व सैद्धान्तिक आधार पर बाह्याचारों का विरोध करते रहे, लेकिन उनमें व्यक्तिगत कटुता, द्वेष नहीं था। कबीर का आत्मविश्वास उन्हें विश्व के व्यापक धरातल पर दिव्यता व भव्यता प्रदान करता है। हृदय व मस्तिष्क का ऐसा मणिकांचन संयोग कबीर में दृष्टिगत होता है, जो एक ओर प्रेम भक्ति के रस सागर में डुबकी लगाते रहे, तो दूसरी ओर समाज में वैज्ञानिक चेतना विकसित करते रहे। कबीरदास जी ने अपने जीवन अनुभवों से जाना कि जो जितना मीठा बोलता है, वह भीतर से उतना ही कपटी

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 11
December 2015

होता है। अगर अपवाद स्वरूप कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाए, जिसकी कथनी व करनी एक जैसी हो तो उसकी वाणी अमृत तुल्य है–

कथनी मीठी खांड सी, करनी विषय की लोय।
कथनी कथि करनी करै, विष से अमृत होय।।

स्वार्थी लोग अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए सामर्थ्यवान् का ही स्तुतिगान करते हैं। वे अज्ञानी यह नहीं जानते कि प्रभु स्मरण से तो प्रभुता भी दासी हो जाती है–

प्रभुता को सब कोउ भजै, प्रभु को भजै न कोय।
कहै कबीर प्रभु को भजै, प्रभुता चेरी होय।।

कबीर गरीबों को भी स्वाभिमान से जीवन यापन के लिए उत्प्रेरित करते रहे। गरीब होना कोई अपराध नहीं। परन्तु हम जिह्वा के स्वाद की तृप्ति के लिए दूसरों के आगे हाथ न फैलायें वरन् रूखा–सूखा खाकर भी संतोषपूर्वक जीवन शान से जियें–

रूखा सूखा खाइ कै ठंडा पानी पीव।
देखि बिरानी चौपड़ी मत ललचावै जीव।।

सत्य का निर्वाह तभी संभव है, जब एषणाओं को अभिवृद्ध करने वाली वृत्तियों को रोका जाए। कबीर सन्तोष धन को सर्वोत्तम धन स्वीकारते हैं–

गोधन, गजधन, वाजिधन और रतनधन खान।
जो आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान।।

संसार में समाज की व्यवस्था के लिए जिस विशिष्ट नियमों व उपनियमों का पालन किया जाता है, ऐसे सार्वजनीन व सार्वभौमिक नियम को धर्म की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। कबीर धर्म के अन्तर्गत सात्विकता, नैतिकता आदि को महत्त्व देते हुए समाज में सहज–धर्म का निदर्शन करते हैं, जो साधक को स्तुति–निन्दा, आशा, मान, अभिमान से मुक्त कर देता है–

असतुति निन्दा आसा छोड़ तजे मान अभिमाना

कबीर जी ने धर्म का धन्धा करने वाले पुजारियों के कथन को भी समाज के सन्मुख लाना चाहा कि अमुक तीर्थ में अमुक देवता के दर्शन करने से बड़े–से–बड़ा पाप कट जाता है। जो व्रत तीर्थ देवदर्शन को पापों से मुक्ति दिलाने का धर्म बताकर धन्धा करते हैं–वे सब लुटेरे हैं। आचरण से श्रेष्ठतम प्रतिमानों का पालन करके ही मन को साधा जा सकता है। कबीर झूठ के व्यापार से सामान्य जन को बचाने की कोशिश करते हैं– जीव हत्या का पाप करोगे, तो तुम्हें उनका फल भुगतना पड़ेगा। घर व वन को समान बना लेने वाले तत्ववेता कबीर जैसे विरले ही होते हैं। प्रभु प्राप्ति के लिए उन्हें कृच्छ साधना की आवश्यकता नहीं–

जिन सहज हरिजी मिलै, सहज कहीजै सोइ।

कबीरदास जी ने गुरु–शिष्य के लिए श्रेष्ठता, स्वनियंत्रण, समदर्शिता, आत्म–नियंत्रण को आवश्यक मानते हुए समाज के सर्वकल्याण की अवधारणा प्रस्तुत की है। सात्विक गुरु प्राप्त करने के लिए अपना सर्वस्व समर्पित करने की विचारधारा कबीर की वाणी में संकलित है–

मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तेरा।

साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 11
December 2015

तेरा तुझको सौंपता क्या लागे है मेरा।।

भस्मलेपी, गुफावासी, जटाधारियों से दो टूक शब्दों में सच कहने की सामर्थ्य कबीर करते हैं–

मन जीत्याँ जग जीतिये, जौ बिषया रहै उदास

हृदय की चरमानुभूति की दशा में राम व रहीम में कोई अन्तर नहीं। कबीरदास जी ने सबकी उत्पत्ति को समान बताते हुए उसमें ईश्वरीय सत्ता का आभास किया है–

एक बूँद एकै मल मूतर एक चाम एक गूदा
एक जोति से सब जग उतपना को ब्राह्मण को सूद।।

कबीरदास जी ने मन को अगाध सागर और मनसा की लहरें स्वीकारा है कि अधिकांश तो इनमें डूब जाते हैं, वही तैर जाता है, जिसके हृदय में विवेक जागृत रहता है–

मन सागर मनसा लहरि बूड़े बहुत अचेत।
कहैं कबीर ते बांचि है, जाके हृदय विवेक।।

संचय का खण्डन वही कर सकता है, जो शब्द विवेकी हो। गुरु कृपा से संशय खंडित होने पर शब्द विवेक हो जाने पर सत्य का बोध होता है कि सारा जगत प्रपंच झूठा है–

झूठै झूठै बेयाजिया, अलख न लखई कोइ।

आत्मा–परमात्मा की एकता आत्मा की अनश्वरता–अमरता के विषय में कबीर का दोहा अद्वितीय है–

जल में कुंभ, कुंभ में जल, बाहर भीतर पानी
फूटा कुंभ जल जलहिं समाना, यह तत कहौ गियानी

लोक की जागृत चेतना ही आलोक है। लोक में ही चैतन्य संभावनाएँ निहित रहती हैं, जब मानव लोक की चेतना से दूर भाग जाता है, तो विस्मृति के गर्त में गिरता है। कबीर भी लोकनायक रहे। उन्होंने समाज की सोई शक्तियों को जगाया। मज़बूती के शिखर पर खड़े होकर कबीर ने राजधारियों, धार्मिक रूढ़ियों, आडम्बरों, अमानवीय चेतना की भव्य महाशक्तियों को ललकारा। लोक शक्ति उनके साथ जुट गई थी, लोक विश्वास उन्होंने अर्पित किया। इसी कारण कबीर को लोक मानस के गहन पारखी के रूप में जाना जाता है। युग पुरुष हमेशा अपने युग की दैहिक, मानसिक, आत्मिक तीनों अस्तित्वों की व्याधि को पहचानता व उसका उपयुक्त निदान भी करता है। कबीरदास जी ने जड़ता को गतिशीलता में बदलकर रूढ़ियों ;मनोरोगों को मिटाकर धार्मिक आडम्बरों का खण्डन करके समूचे समाज को स्वस्थ बनाना चाहा। क्रान्तिकारी व्यक्तित्व के धनी कबीरदास जी ने तटस्थ होकर सामाजिक व आर्थिक विषमताओं को निहारा, अपने प्रखर व्यक्तित्व से इन्हें मिटाकर एकत्व की स्थापना करने का निश्चय किया। आर्थिक वैषम्य समाज में अराजकता पैदा करता है। अतः स्वस्थ समाज के लिए वैषम्य समाप्ति आवश्यक है। मानव के साथ उसके परिवेश को संदर्भित कर विशाल समाज का सृजन होता है। समाज के अन्तर्सम्बन्धों के सन्दर्भ में कबीरदास जी का दृष्टिकोण संरचनात्मक है। अगर मनुष्यता को जीवित रखना है, तो हमें कबीरदास काव्य का अवगाहन सौ बार करना होगा, तभी हम शिष्ट मनुष्यता व सभ्य समाज के दर्शन कर सकेंगे। आज से 600 वर्ष पूर्व संत कबीर ने साम्प्रदायिकता की जिस समस्या की ओर समाज का ध्यान

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 11
December 2015

आकर्षित किया, वह आज भी प्रसुप्त ज्वालामुखी की भांति भयंकर वाक देश के वातातरंग को विदग्ध बना रही है। कबीर का सफल दर्शन मानव जाति के गृहणीय अर्थवान् सहज व स्पष्ट है। कबीर की आधुनिक सन्दर्भ में प्रासंगिकता का मुख्य कारण उनका मानवतावादी दृष्टिकोण व प्रगतिशील चिन्तन है। उनकी वैचारिक प्रखरता में इतनी दूरदर्शिता थी, जो युगों–युगों आत्मज्ञान के आलोक में भावी पीढ़ी का पथ आलोकित करती रहेगी, क्योंकि आज 600 वर्षों के बाद 21वीं सदी में कबीरदास जी का संदेश नित नूतन है। कबीरदास जी ने जिस साधना का बीज बोया वह आज भी प्रासंगिक है। उनका दर्शन जीवित है, उनका संघर्ष ज़िन्दा है। मनुष्य अतीत से वंचित होकर एवम् भविष्य से आशंकित होकर अप्रासंगिक हो गया, इसीलिए संसार के जीवन का राग सुनाने वाले कबीर की वाणी की आवश्यकता अनुभव होती है, क्योंकि चारों ओर ध्वंस के ढेर पर कबीर ही तो मृत्यु से अमरत्व की ओर अग्रसर हैं–

हम न मरै मरिहैं संसारा, हमकूँ मिला जिआवन हारा।

सन्दर्भ ग्रन्थः–

1 डॉ॰ इन्दिरा सिंह, कबीर के काव्य का अनुशीलन,मनीष प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण 2006।
2 डॉ॰ पुष्पपाल सिंह, कबीर ग्रन्थावली,प्रथम संस्करण, नमन प्रकाशन,नई दिल्ली, 2004।
3 चन्द्र देव राय, कबीर और रैदास का तुलनात्मक अध्ययन, सौहार्द प्रकाशन,वाराणसी, 2002।
4 बिन्दु दूबे, संत कबीर का साहित्य, कला प्रकाशन, वाराणसी, 2002।
5 गुरनाम कौर बेदी,कबीर चिन्तनःनया सन्दर्भ ,निर्मल पब्लिकशनस,दिल्दी 1996।
6 रवीन्द्र कुमार सिंह : संत काव्य की प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन,दिल्ली, 1994।
7 राम कुमार वर्मा, कबीर का सामाजिक दर्शन,नेहरू नगर,कानपुर,1974।
8 सरनाम सिंह अरुण,कबीर वाणी, प्रसाद बुक टस्ट, आगरा, 1972।
9 गोविन्द त्रिगुणायत,कबीर की विचारधारा, साहित्य निकेतन, कानपुर,1970।
10 केदार नाथ द्विवेदी, कबीर और कबीर पंथ,हिन्दी साहित्य सम्मेलन ,प्रयाग,1964।
11 आचार्य परशुराम चतुर्वेदी,कबीर साहित्य की परख,भारती भंडार ,इलाहाबाद प्रैस,प्रथम संस्करण, सम्वत् 2001।
12 आचार्य परशुराम चतुर्वेदी,उतरी भारत की संत परम्परा ,भारती भंडार ,इलाहाबाद प्रैस,प्रथम संस्करण, सम्वत् 2001